हिंदी सिनेमा के बदलते सरोकार

- जगदाले अप्पासाहेब गोरक्ष

शोध सारांशः

प्राचीन काल में दीया के प्रकाश पर पर्दा लगा रहता था। उससे पात्रों की चहल– पहल दिखायी जाती थी। भारत में नृत्य के साथ संवाद एवं संगीत का मिलाफ था। जिससे जनता के कानों में आवाज गुनगुनाती रही है। दादासाहेब फाल्के जीवन संघर्ष निहित था कि विदेश में जाकर तकनीकी सिख गए। जिसका प्रयोग से पहली बार भारतीय सिनेमा में किया। मराठी संत काव्य में संत ज्ञानदेव ने 'रूपमाया' शब्द को संगीत नृत्य के संदर्भ में किया था। दादासाहेब फाल्के ने इंग्लैंड से वापस आकर आपने वक्तव्य पर ठाम रहे है कि पहला भारतीय चित्रपट 'राजा हरिश्चंद्र ' नाम से निर्मित किया । उसमें संवाद न होने से किसी को कोई भाषा की समस्या नहीं लगी। क्योंकि वह पहला मुख सिनेमा था।भारतीय सिनेमा के प्रमुख हस्ताक्षर के रूप में दादासाहेब फाल्के को माना जाता है परंतु उनको मददत करनेवाले यशवंत नाडकर्णी ही थे। जिसके पश्चात वे इतना मुकाम हासिल किया था।जिस तरह से डा॔. बाबासाहेब अम्बेड़कर को मदत करनेवाले शाहू महाराज थे। दादासाहेब फाल्के को तारामती की स्त्री भूमिका करने के लिए कोई पुरुष सूझ नहीं रहा था। ऐसी स्थिती में चायवाले के दुकान पर काम करनेवाले कृष्णा साळुके बडी मिन्नत करने के बाद अभिनय करने के लिए मान गए। उसीको नायिका की भूमिका को सादर करनेवाली भारतीय सिनेमा की पहली महिला है। दादासाहेब फाल्के ने पहली फिल्म को बनाने के लिए असंख्य समस्यांओ का सामना करने के पश्चात पहली फिल्म निर्मित की गई। जिससे आम जन को सिनेमा में अपनी कला को प्रदर्शित करने का अवसर मिला।

बिज शब्द : सिनेमा , नायक–नायिका, भूमिका, निर्देशक , गीत–संगीत, कथा

भारतीय कला प्राचीनकाल से अभिव्यक्ति का माध्यम रही है । उसमें हस्तकला, चित्रकला ,लोककला, गायन, वाद्य आदि कलाओं को सिनेमा के माध्यम से विशेष लोकप्रियता प्राप्त हुई । इन कलाकारों ने अपनी कला के माध्यम से मनोरंजन के साथ समाज को अच्छा संदेश देने का प्रयास किया । भारतीय सिनेमा की जब भी बात की जाती है, उसको प्रमुख चार चरणों में विभाजित करके देख सकते हैं । (i) प्रथम चरण सन् 1913–1930 (ii) द्वितीय चरण सन् 1931–1946 (iii) तृतीय चरण सन् 1947–1960 (iv) चतुर्थ चरण सन् 1970– से लेकर अब तक । सन् 1970 बाद के सिनेमा को भारतीय सिनेमा का 'आधुनिक युग' कहा जाता है । मराठी की पहली थिएट्रीकल फिल्म 'श्री पुंडलिक' 18 मई सन् 1912 में 'आर. जे. तोरने' ने मुंबई में बनाई थी परंतु इस

फिल्म को किसी कारण से 'मुक फिल्म' का दर्जा नहीं मिल पाया । भारतीय फीचर की पहली फिल्म 3 मई 1914 में 'राजा हरिश्चंद्र' दादासाहेब फाल्के द्वारा निर्मित हुई थी ।

सन् 14 मार्च 1931 को 'आलम आरा' के निर्माता 'आरदर्शी ईरानी' ने हिंदी की पहली बोलती फिल्म निर्मित की । इसके पश्चात तमिल भाषा में 'सागर मूवीटोन' ने 'कालिदास' नामक फिल्म निर्मित की थी । इसके तदुपरांत फिर बोलती फिल्मों का रिलीज होने का मानों एक दौर आरम्भ हुआ हो । वह चाहे बंगाली, मराठी, पंजाबी, तेलुगु, मलयालम आदि । जिससे लगभग हर भाषा में धीरे–धीरे फिल्मों का स्तर सुधारने लगा था । क्योंकि भाषा के संवाद तथा गीत ने सिनेमा को अधिक लोकप्रिय बनाया । भाषा के बिना सिनेमा की संवेदना दर्शक के साथ तादात्म्य स्थापित करने में कुछ हद्द तक कठिनाई प्रतीत होती है परन्तु बाद में दर्शक को फिल्मों से मानों एक रस्ता मिला हो । फिल्मों में कलाकार की प्रतिभा एक साथ कहीं भूमिका का निर्वाण करती रही है । जैसे फिल्म निर्माता, गायक, संगीत,अभिनय आदि । 'ईस्ट इंडिया कंपनी ने भी फिल्मों में आकर हस्तक्षेप किया और सन् 1933 में 'सावित्री' नामक फिल्म निर्मित की थी । इस फिल्म निर्माण के बाद भारत के बड़े–बड़े शहरों में जैसे कोलकत्ता, चेन्नई, मुंबई में स्टूडियों खुलने लगे थे । इससे एक 'मसाला' फिल्में निर्मित होने लगी थी । उस दौरान भारत सरकार ने 'फिल्म डिवीजन' का निर्माण किया था, जिसका प्रमुख उद्देश था कि प्रतिभावंत नायक–नायिकाओं की आर्थिक सहायता करना था । इससे सामान्य कलाकार की प्रतिभा समाज के सामने खुलकर प्रगट हुई ।

सन् 1913 का दशक भारतीय सिनेमा का शुरुवाती दौर रहा था । उस समय काफी मात्रा में फ़िल्मों निर्माण हुआ था परन्तु उसमें सर्वोत्कृष्ठ सिर्फ 13 फिल्में साबित हो पायी । उन फिल्मों को 'राष्ट्रीय अभिलेखाकार' से सम्मलित किया । भारतीय सिनेमा के प्रमुख हस्ताक्षर के रूप में 'दादासाहेब फाल्के' को जाना जाता है । जिन्होंने मराठी और भारतीय सिनेमा के इतिहास में पहला मूक सिनेमा 'राजा हरिश्चंद्र' को 3 मई सन् 1913 को निर्मित किया । वह एक मराठी भाषा की पहली फिल्म थी । उस समय सिनेमा और नाटक को में 'स्त्री' पात्रों की भूमिका का निर्वाहन करना बहुत निचले स्तर का कार्य समझा जाता था । स्त्रियों को सामाजिक तौर इतनी छूट नहीं दी जाती थी । इसलिए जहाँ कहीं स्त्री पात्र की भूमिका होती थी । उसको पुरुष पात्र निभाया करता था । वह कार्य 'दादासाहेब फाल्के' सिनेमा में करके दिखाया । उन्हीं के नाम पर भारतीय सिनेमा के क्षेत्र में सर्वोकृष्ट भूमिका निभानेवाले नायक–नायिका को 'दादासाहेब फाल्के पुरस्कार' से सम्मानित किया जाता है । उन्होंने फिल्म में भूमिका करने के साथ कुछ फिल्मों का भी निर्माण किया था । दादासाहेब फाल्के ने 27 दिसम्बर सन् 1913 को 'भस्मासुर मोहिनी' फिल्म को निर्मित किया था । इस फिल्म की कहानी पौराणिक कथानक पर आधारित थी । जिसमें भारतीय सिनेमा के इतिहास में पहली बार किसी नायिका के रूप में स्त्री की भूमिका 'कमलाबाई' ने निभाई थी । यह फिल्म काफी चर्चित रही थी । इसके पश्चात तीसरी फिल्म 6 जून सन्

1914 को 'सावित्री–सत्यवान' आयी थी । इस फिल्म में चलचित्र के साथ ध्वनि का प्रयोग किया गया था ,जो इसके पहले की फिल्मों में नहीं हुआ करता था ।

इसके बाद हिंदी में प्रेमचंद की कहानी पर निर्देशक 'मोहन भवनानी' ने सन् 1934 में 'मिल मजदुर' फिल्म बनायीं थी । इस फिल्म से प्रभावित होकर मजूदर वर्ग के अंदर चेतना भड़क उठी थी और वे रस्ते पर उतरकर प्रदर्शन करने लगे थे । इससे एक बात साबित हुई कि सिनेमा का समाज पर बहुत गहराई से प्रभाव पड़ने लगा था । उस समय के कलाकारों की कला समाज में नौटंकी, रामलीला के माध्यम से प्रदर्शित हो रही थी । इसके अलावा समाज के साधारण परिवार के युवक–युवतियां फिल्मों के बारे में सोचने–विचारने लगे थे । इसलिए फिल्मों का शुरुवाती दौर में ईश्वर, संत,समाजसुधार व महापुरुष के जीवन चरित्रों को सिनेमा के दवारा दिखाया जाने लगा था । सन् 1935 में पी.सी.बरुआ ने 'देवदास' फिल्म का निर्माण किया था । 'देवदास' फिल्म के नायक की भूमिका को देखने से पता चलता है कि वह सही ढंग से न प्यार कर पाता और न समझ पाता है । वैसे देखा जाए, तो देवदास 'पारो' के साथ विवाह करके अपना जीवन–निर्वाह कर सकता था ! 'पारों' उसे कितना प्यार करती थी उन दोनों के बीच में घर–परिवार, समाज की पुख्ता रुढ़ि, परंपरा लोकलाज आदि के डर भय के वजह से समाज में अपनी व्यक्तिगत पसंदीता को कोई विशेष अहमियत नहीं मिल पायी । ऐसे में नायक अपने प्रेम का त्याग कर देता है और अपने फैसले को समाज तथा परिवारों पर छोड़ देता है । उस दौर में हिंदी फिल्मों की कहानियाँ अपने प्राथमिक तथा किशोर अवस्था में थी और बाद में धीरे–धीरे बढ़कर दौड़ना बोलना सीखा । जिसके पश्चात फ़िल्में अपने खास संवाद के कारण सुपरहिट हो गई ।

सन् 1947–1960 तक के समय को भारतीय सिनेमा का 'स्वर्णयुग' कहा जाता है । इस कार्यकाल में हिन्दी तथा बंगाली, मराठी के साथ अन्य भाषाओं में फिल्म बनने लगी थी । उस समय के सभी युवाओं में आजादी की चाहत पाने का उत्साह में मौजूद था । ऐसी होड़ लगी थी कि हर कोई देश के लिए मर–मिटना चाहता था । ऐसे परिदृश्य फिल्में के रूप में तत्कालीन समय में उभरकर आए । जिन फिल्मों को देखकर बहुत हद्द तक बच्चे व् युवा प्रभावित होते रहे हैं । इसके पश्चात्त गांधीवादी, मार्क्सवादी, समाजवादी विचारधारों का प्रभाव सिनेमा पर पड़ने लगा था । महान निर्देशक 'चेतन आनंद' की फिल्म 'नीचा घर', 'ऋत्विक घटक' की फिल्म 'नागरिक', 'विमल राय' की फिल्म 'दो बीघा जमीन', 'सत्यजीत राय' की फिल्म 'पाछे पंचाली', 'राज कपुर' की फिल्म 'आवारा', (1951) 'महबूब खान' की फिल्म 'मदर इंडिया', (1957) 'के. आसिफ' की फिल्म 'मुगले आजम' (1960) तथा 'गुरुदत्त' की फिल्म 'प्यासा' (1960) आदि । इन सिनेमा ने समाज को साहित्य के साथ एक नयी दृष्टि तथा दिशा देने का प्रयास किया था । एक तरफ आजादी के सपने थे तो दूसरी और सामंतशाही से आमजन का जीवन यथार्थ को सिनेमा ने हु–ब–हु दिखाने का महनीय कार्य किया । उसमें

'राज कपूर', 'दिलीप कुमार', 'देव आनंद' तथा 'मधुबाला',नर्गिस दत्त, 'वहीदा रहमान' आदि प्रमुख कलाकारों के अभिनय ने जनता के दिलों पर राज किया था ।

सन् 1970 से लेकर अब तक के दौर को भारतीय सिनेमा का 'आधुनिक युग' कहा जाता है । इसमें प्रमुख भूमिकाओं में 'देव आनंद', 'राजेश खन्ना', 'अमिताभ बच्चन', 'धर्मेन्द्र','मनोज कुमार', 'कमल हसन', 'जितेंद्र' तथा 'नर्गिस', 'रेखा', 'हेमा मालिनी', 'श्रीदेवी' आदि कलाकारों के पदार्पण से भारतीय सिनेमा को एक अलग आयाम मिला था । उस दौर की 'आनंद' (1971), 'अमर प्रेम' तथा 'कटी पतंग' (1972) आदि फिल्मों ने 'राजेश खन्ना' को एक पहचान दिला दी । जिससे राजेश खन्ना के फिल्मों की लोकप्रियता इतनी बढ़ी की थी । वे भारतीय सिनेमा के पहले सुपर स्टार बन गए । सन् 1975 में 'रमेश सिप्पी' के निर्देशन में ' शोले ' फिल्म आयी थी । वह अपने संवाद व् डायलॉक के कारण हिंदी सिनेमा में एक मिल का पत्थर बन गई । इस फिल्म के नायक को यथा उचित न्याय न मिलने के वजह से उसमें हिंसात्मक मानसिकता उभकर आयी थी । उदाहरण स्वरुप 'जंजीर' एवं 'शोले' जैसे सिनेमा अपने संवाद के कारण सुपरहिट बन पाये थे । 'मांझी– द माउंटेन मैन' नामक फिल्म का संवाद हमारे जीवन में लगन से कार्य करने की प्रेरणा देता है । हमें जीवन में विफलता आने पर भगवान को कोसना नहीं चाहिए।

प्रसिद्ध फिल्मकार तथा 'निर्माता श्याम बेनेगल' का मानना था कि " इस समय भारतीय सिनेमा का आंदोलन पहले के मुक़ाबले बहुत तेज है । उनका कहना है कि आज युवा निर्देशक सिनेमा में आधुनिक सोच लाने में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं ।"

सन् 1980 के दशक में सिनेमा में समांतर आंदोलन चला था । उस समय के जीवन यथार्थ को सिनेमा ने भली–भांति समाज के सामने दिखाने का प्रयास किया है । सन् 1985 में निर्देशक 'राज कपूर' की 'राम तेरी गंगा मैली' नामक फिल्म में मुख्य भूमिका के रूप में नायक – नायिका राजीव कपूर तथा मन्दाकिनी थी । जहाँ पर मन्दाकिनी ने पहाड़ी लड़की की भूमिका निभाई थी और वह सर्वोत्कृष्ठ साबित हुई थी । 'राम तेरी गंगा मैली' फिल्म को 'फिल्मफेयर पुरस्कार' से सम्मानित किया गया । उस फिल्म में 'गंगा' नाम की एक स्त्री है । दूसरी ओर 'गंगा' नाम की एक नदी है । यह दोनों को पुराण तथा वेदों में बहुत पवित्र माना गया है । इस दृष्टिकोण से समाज को नदियों की ओर देखने का उपदेश दिया है । जहाँ गंगा एक स्त्री की व्यथा है ओर दूसरी नदी की पवित्रता है, यह दोनों पूरे सिनेमा के इर्द–गिर्द होती है । पाठक वर्ग ने फिल्म के साथ गीत को भी बहुत सह्रनियता दी ।

सन् 1990 का दशक तक आते–आते हमारा भारतीय सिनेमा का प्रेम अपने अंतरराष्ट्रीय रूप में तब्दील होता है । विदेश में जितने भारतीय लोग रहते है, उनका अपने देश के प्रति प्रेम जाग्ररीत होने लगता है । जिसमें फिल्म – परदेश, कुछ कुछ होता है, आदि फिल्मों में नायक प्रेम खोजता–फिरता रहता है । गीतकार शेलेन्द्र

जी का एक गीत है 'मेरा जूता है, जापानी ,..... फिर भी दिल है हिन्दुस्तानी' इस गीत की भाषा को देखने से साहित्यिकता भले प्रतीत न होती हो परन्तु हिन्दुस्तान के सामान्य परिवार की हिंदी भाषा है । 'फिर भी दिल है हिन्दुस्तानी' नामक गीत को जावेद अखतर ने लिखा था । इस गीत के माध्यम से विदेश जाने के पश्चात भी हम अपने देश प्रेम को नहीं भूल पाए, ऐसा आभास देता है । उसके साथ ही भारत–माता का गुणगान गाया है । इन फिल्मों के गीतों में भी देश प्रेम को प्राथमिकता दी है । पहले गीतों में शायरी भी हुआ करती थी । आज के गीत–संवाद को लिखने के लिए तकनीक की सहायता बढ़ गई, जिससे गीत का समय ज्यादा से ज्यादा तीन मिनट में समाप्त होता है । आज की फिल्मों के संवाद तथा गीत हमारे दिल की गहराइयों को नहीं छू पाते हैं । जहाँ पुराने गीत को कितनी भी बार सुन लीजिए, एक आत्मीयता हमेशा बनी रहती थी । उस दौर के मशहूर हसतियाँ के गीतों में हुआ करती थी । आज के गीतों में वह बात कहा है ! मशहूर गीतकार– बी.आर चोपड़ा, सत्यजित राय,विमल दा, साहिर लुधियानवी, खय्याम, नौशाद आदि । उस दौर में हिन्दी लेखकों ने सिनेमा में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया और सिनेमा की भाषा को अच्छे ढंग से समझाकर उसे अभिव्यक्ति दी । हिन्दी सिनेमा में गुलजार का नाम महत्त्वपूर्ण रहा है। कमलेश्वर ने 'आँधी', 'मौसम' जैसे फिल्मों के गीत–संवाद 'गुलजार' ने लिखे थे, जिसे लोगों ने बहुत पसंद किया था । हिन्दी सिनेमा कई दौर से गुजरा। जिसमें पौराणिक कथा, इतिहास, स्वतन्त्रता आंदोलन, किसान, मजदूर की समस्या तथा बच्चों की व्यथा सिनेमा की कहानी के रूप में व्यक्त हुई । कलाकार राजकपुर, अमीर खान से लेकर अजय देवगन ने बच्चों को केंद्र में रखकर बाल सिनेमा में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी । बेनेगल ने कहा कि "अनुराग कश्यप, विशाल भारद्वाज, सुजीत सरकार तथा अन्य निर्देशक हिन्दी बंगाली, तमिल, तेलुगू मलयालम सिनेमा में हैं, जो यथार्थ को दिखाती फिल्मे बना रहे हैं। " उस फिल्म में बच्चों ने मनोरंजन के साथ जीवन से जुड़ी घटना की ओर दर्शकों का ध्यान आकृष्ट किया ।

शेखर कपूर द्वारा निर्देशित फिल्म 'मिस्टर इंडिया' आमिर खान दवारा निर्देशित फिल्म 'तारे जमी पर', इरफ़ान कमल की 'थैंक्स माँ', अनिल देवगन की 'राजुचाचा', संदीप सावंत की 'श्वास', मिलिंद उके की 'पाठशाला' आदि सिनेमा व्यावसायिक रुप से सफल रहा है। इसका समाज पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है । सुनीत सरकार की फिल्म 'विकी डोनर' प्रोड्यूसर 'जान अब्राहम' थे । यह फिल्म अपने विषय–वस्तु के कारण दर्शकों का ध्यान आत्कृष्ट करती है तथा आयुष्यमान स्पर्म 'डोनर विकी' के भूमिका में हैं । उन्हें नये की तलाश होती है, जहाँ एक गुमनाम–सी डांसर सिल्क स्मिता की जिंदगी को एक सफल फिल्म की कहानी बना दिया । हिन्दी सिनेमा में 'सिल्क' कभी 'आइटम गर्ल' से ज्यादा दर्जा हासिल नहीं कर पायी थी । भारत में किसी घटना का लेखा–जोखा को किसी फिल्म के माध्यम से देखते हैं । उस फिल्म में घटना प्रधान दृश्य हमारे मानस को बहुत हद्द तक गहराई से सोचने के लिए बाध्य करते हैं । वह घटना भले हमारे आस–पास की होने के बावजूद फिल्माकंन से उस समाज की बन जाती है । जिससे घटना समाज के केन्द्र में आती हैं। इस तरह की फिल्में

वर्तमान समय में समाज में उभरकर आ रही है । अपने देश की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों के बदलाव के साथ समाज को प्रभावित किया है । इसका प्रभाव जनसमान्य के जीवन पर भी पड़ा । समय के साथ फिल्मों की कहानी, गीत–संगीत, दृश्य, प्रतीक, संवाद बदलते गए । पौराणिक और ऐतिहासिक फिल्मों की कहानियाँ देखकर हमारा बचपन बित गया । उस फिल्म के नायक–नायिका का अभिनय पुराणों तथा इतिहास से संबंधित होता था । एक तरह से अभिनय करनेवाले नायक–नायिका जनता के पूज्यनीय भगवान बन गए थे। जिस तरह से बच्चों का बचपन से बुजुर्गो के प्रति आस्था का भाव रहता था । वह भाव चाहकर भी अपने मन से निकाल नहीं पाते है, वहीं छवि उनके मानसपटल पर निर्मित रहती है । उसे बाद में मन मस्तिष्क से निकाल पाना संभवतः कष्ट प्रायः प्रतीत होता है । आज का समय में माता–पिता के सामान बढ़ो के प्रति आदरभाव नहीं रहा है । क्योंकि सिनेमा के परिदृश्य में वैश्वविककरण तथा व्यावसायिककरण ज्यादा हावी हो गया । जिससे सिनेमा की कहानी न गीत न संवाद न दृश्य हमारा भावबोध में आत्मीयता प्रकट नहीं कर पाते हैं ।

अतः कहा जाता है कि हिन्दी सिनेमा के बदलते सरोकार ने हमारी मानसिक तथा वैचारिकता में नयी दिशा देने का प्रयास कर रहा है । जिससे हमारा दैनंदिन जीवन को काफी हद तक प्रभावित कर रहा है। सिनेमा की कहानियाँ हमारे आस–पास में घटित होकर उभरकर आ रही है । उसमें घटना–प्रसंग भले अन्याय अत्याचार तथा चोरी डकैत से ज्यादा अब अनैतिक संबंध, फैशन के नाम पर आधुनिक सोच लाया जा रहा है । इसलिए आज के कुछ सिनेमा को आपने परिवार के साथ नहीं देख पाते हैं । फिल्म में कुछ ऐसे दृश्य आते हैं कि जिससे आपको हिचकिचाहट होने लगती है। इस तरह का प्रचलन समाज में चल रहा है । वह रुढी चाहे परम्परा हो तथा आधुनिक रहन–सहन हो आदि को सिनेमा ने बड़ी गहराई से प्रदर्शित किया है । इसमें एक खास बात हैं कि सिनेमा की भाषा में लोग भारतीय भाषा के शब्द को डायलॉक के माध्यम से प्रयुक्त कर रहे हैं । उसमें कहीं बार खुले आम गालियों को हु–ब–हू प्रयोग किया जाता है । वह गाली आंचलिकता के कारण हमें बुरी भी नहीं लगती, क्योंकि सिनेमा की कहानी का कथानक ने अपने परिवेश का यथार्थ को सही तरीके से वर्णित किया है । अब भारतीय सिनेमा पर हालीवुड का ऐसा असर हुआ कि वह सिनेमा में तकनीकी ज्यादा प्रयुक्त की जा रही है । जिससे कलाकार की खास मौजूदगी न भी रहे तो सिनेमा की कहानी आगे बढ़ती रहती है । इस हालीवूड के प्रभाव से बालीबुड अपने मूल यथार्थ कहानी तथा भाषा कही खो गयी है! सिनेमा का मूलतत्त्व भाषा के प्रयोग में कमिया आने लगी है । हालीवुड के सिनेमा की कहानियों का यथार्थ हिन्दी सिनेमा का यथार्थ बनता जा रहा है ।

इसलिए आज की मीडिया ने देश–विदेश की घटनाओं का बखान किया है परंतु सच तो अपराध, फैशन, विज्ञापन के प्रचार–प्रसार, राजनीतिक घोटाले, जातियता, धार्मिक उन्माद, लव–जिहाद से हिन्दू–मुस्लिम धर्मातरण आदि कहानियाँ फिल्म बनकर आ रही है। इस तरह की कहानियों को सिनेमा ने ज्यादा हाइलाइट किया गया परंतु जीवन की असली सच्चाइयों को कम दिखाता है । देश में लोगों की मूलभूत समस्या क्या है ?

उसका हल कैसा निकालना चाहिए! उसको फिल्म के माध्यम से दिखाने का प्रयास किया है । सिनेमा की कुछ कहानी अपने जेंनविन समस्या को सामने लाती है । सिनेमा ने हमारे खान –पान, रहन– सहन, रीति– रिवाजों पहनावे तथा आस–पास के वातावरण को काफी हद्द तक प्रभावित किया है ।

सहायक फिल्म

1. दो बीघा जमीन निर्देशक –विमल राय
2. 1935 में पी.सी.बरुआ ने की फिल्म 'देवदास'
3. कटी पतंग 1972 अभिनेता – राजेश खन्ना
4. लगान 2001 निर्देशक आशुतोष गोवारीकर अभिनेता – अमीर खान
5. किसान 2009 निर्देशक – पुनीत सेरा
6. विकी डोनर, प्रोड्यूसर – जान अब्राहम
7. फिर भी दिल है हिन्दुस्तानी–संजय छेल
8. मांझी– द माउंटेन मैन
9. सं. इन्द्रजीत सिंह , गीतकार शेंलेंद्र तू प्यार का सागर है, गोबल पब्लिकेशन प्राइवेट लि.हरियाणा

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. समसामायिक सृजन – सं. महेंद्र प्रजापति
2. वर्तमान साहित्य सिनेमा विशेषांक 2002
3. हंस सिनेमा विशेषांक 2013
4. अपनी माटी अंक 25 त्रैमासिक पत्रिका – अप्रैल – सितंबर 2017
5. बॉलीवुड ए h i s t o r y – मिहिर बॉस

हिन्दी विभाग (अतिथि प्राध्यापक), ओड़िशा केन्द्रीय विश्वविद्याल, कोरापुट–763004
ईमेल –jagadaleappasaheb@gmail.com, Mo. 8787679094